पावन जीवन चरित्र

श्रीश्रीमद् भक्ति दयित माधव गोस्वामी
महाराज जी का जीवन चरित्र

SGD

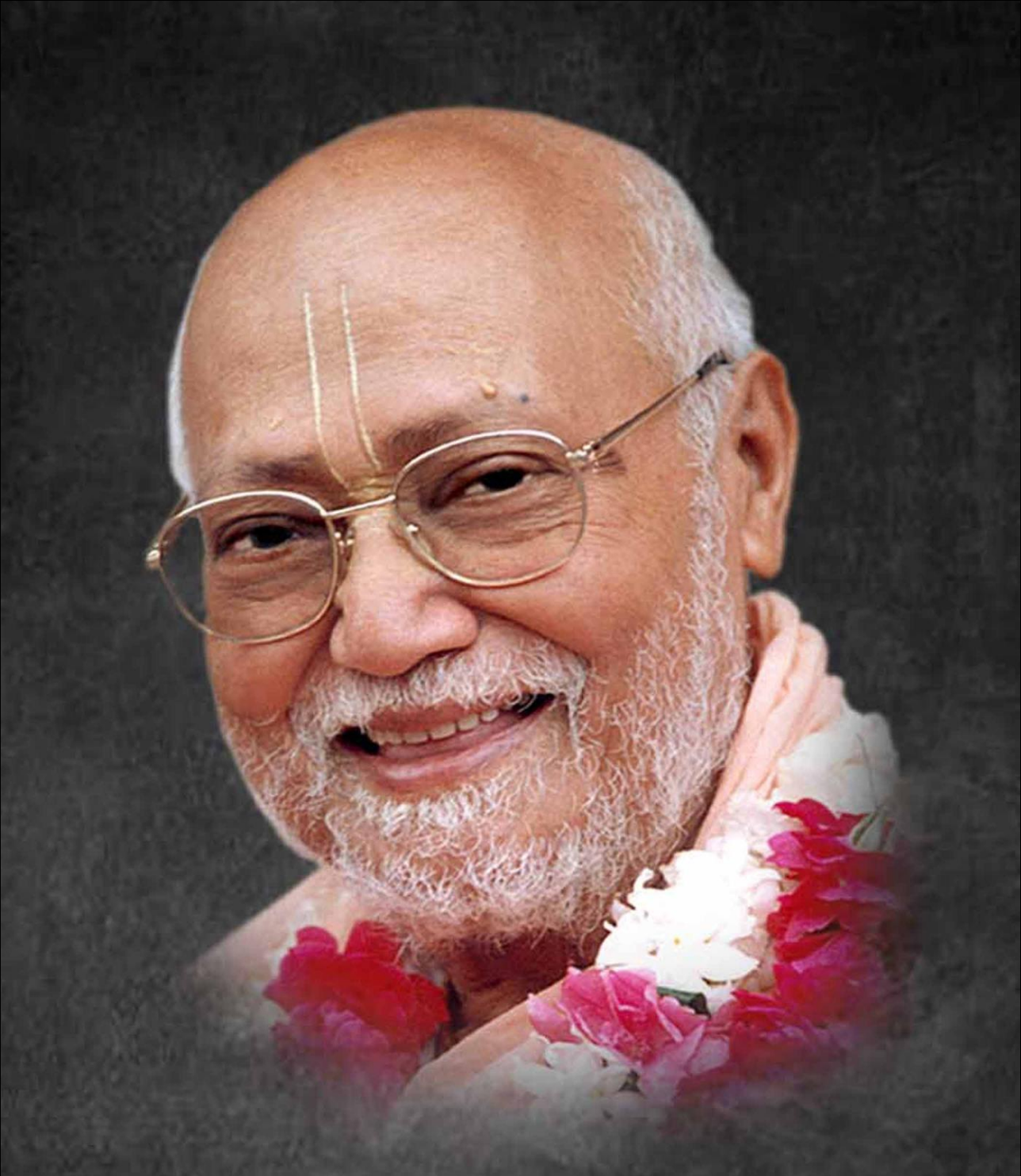

निखिल भारत श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ
प्रतिष्ठान के प्रतिष्ठाता,
नित्यलीला प्रविष्ट ॐ 108
श्री श्रीमद् भक्ति दयित माधव गोस्वामी
महाराज विष्णुपाद जी के
प्रियतम शिष्य, त्रिदण्डिस्वामी
श्रीमद् भक्तिबल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज
जी द्वारा सम्पादित

SGD

तृतीय खण्ड

भाग – 16

श्रीचैतन्य महाप्रभु जी का
आचरित और प्रचारित प्रेमधर्म
ही विश्व समस्या समाधान और
हिंसाद्वेष दूर करने में समर्थ

श्रीलगुरुदेव

(श्रीचैतन्यवाणी पत्रिका के अट्ठारहवें वर्ष की प्रथम संख्या की श्रीचैतन्यवाणी वन्दना में श्रील गुरुदेव जी की उपदेशवाणी)

'श्रीचैतन्यदेव 491 वर्ष पूर्व गंगा के पूर्व तट पर वृन्दावन से अभिन्न सुरम्य श्रीनवद्वीप धाम के अन्तर्गत श्रीमायापुर में अवतीर्ण हुये तथा उन्होंने स्वयं आचरण करके जीवों को उनके परम कल्याण के निमित्त श्रीकृष्णप्रेम के अनुशीलन की जो शिक्षा दी है, वही वर्तमान कलियुग

में विस्तृत होकर असदाचारी एवं नानाभाव से दुर्गत मनुष्यों को परम सुखमय श्रीभगवत्प्रेमानुशीलन का सुयोग प्रदान कर रही है।

काम व क्रोध में आसक्त मनुष्य राजसिक और तामसिक नीति का सहारा लेकर रजोगुण और तमोगुण के विषयों को ग्रहण करके परस्पर हिंसा-द्वेषादि से पराजित होते हैं एवं निरन्तर अशान्ति की आग में जलते रहते हैं। नशेड़ियों की भाँति राजसिक तथा तामसिक क्रियाओं को ही स्वयं का व समाज के सुख का कारण मानकर बस इन्हीं की

चर्चा करते रहते हैं। श्रीचैतन्य देव जी की आत्मधर्म तथा प्रेमधर्म की उपदेशावली उनके निजजनों द्वारा जगत में बार बार प्रचारित हो रही है जिससे वर्तमान विश्व में अनेक कृतिवान् व्यक्ति श्रीचैतन्य-वाणी में आकृष्ट हो रहे हैं। श्रीभगवत्-प्रेम ही मनुष्यों की सुख-शान्ति का एकमात्र उपाय है तथा ये ही आपस में लड़ रहे देशों में एकता लाने व आपसी शान्ति स्थापना कराने में समर्थ है। दुनियाँ के लोग धीरे-धीरे इस तत्त्व को समझ रहे हैं तथा श्रीकृष्ण प्रेम पाने के लिये वे हिंसा व द्वेषादि का परित्याग करके परस्पर

प्रेमानुसन्धान पथ के पथिक बने रहे हैं | भगवद्-प्रेम के पथिकों को इस सुन्दर पथ पर आगे बढ़ते देखकर मुझे बड़े हर्ष व उल्लास का अनुभव हो रहा है। 'श्री चैतन्य वाणी' यदि कृपा पूर्वक पृथ्वी के विभिन्न देशों में विभिन्न प्रकार की भाषा बोलने वाले व्यक्तियों में अपना स्वरूप विस्तार न करे तो जगत के जीवों का आपसी हिंसा-द्वेषादि जल्दी-जल्दी खत्म नहीं होगा। 'श्री चैतन्य वाणी' कानों में प्रविष्ट होने से ही मनुष्य का जन्म का अभिमान, ऐश्वर्य की मत्तता, विद्यावत्ता की दाम्भिकता एवं रूप यौवनादि का

गर्व धीरे-धीरे जाएगा तथा उनमें यथार्थ तत्त्व को समझने की व उसे धारण करने की योग्यता आ जाएगी। जब कोई व्यक्ति किसी विषय में प्रमत्त हो जाता है तो वह अन्यान्य विषयों के प्रति यथायोग्य व्यवहार करने में समर्थ नहीं होता है। अन्य किसी विषय में आविष्ट होने पर मनुष्य वास्तव तत्त्व को समझने, उसे धारण करने तथा उसका ज्ञान प्राप्त करने से वन्चित होता है।

श्रीचैतन्य वाणी कानों में प्रविष्ट होने पर हम जन्म-ऐश्वर्य-श्रुत - श्री के अभिमान में प्रमत्त न होकर

श्रीभगवान्, भगवद्भक्त एवं सत्शास्त्रादि के अनुशीलन में योग्यता प्राप्त कर सकते हैं।

हमारे दुर्भाग्य के कारण साधारण लोगों की जीविका निर्वाह के लिये आधुनिक युग में केवल बाहरी बनावट के प्रति ही देश के शासकों में आग्रह देखा जाता है। धर्म एवं नीति को अनावश्यक समझने के कारण दुर्नीति और स्वतन्त्रता ही प्रबल आश्रय ले रही है । नीति- विरुद्ध जीवन से एक अथवा अनेक प्राणियों में वास्तविक सुख प्राप्ति की कोई सम्भावना नहीं

देखी जाती है। वैसे तो कोई भी धर्महीन जीवन पालन नहीं करता है। जिनकी समझ में यह नहीं है कि आत्मा या ज्ञान नाम की कोई वस्तु है, वे शरीर धर्म या मनोधर्म के अनुसार चलते रहते हैं। किन्तु शरीर और मन में से कोई भी जीव का स्वरूप न होने के कारण उक्त शरीर-धर्म एवं मनोधर्म जीव को सुख या शान्ति नहीं दे सकते हैं। जीव मात्र ही चित्तत्त्व अर्थात् आत्मा है । इसलिये आत्मधर्म ही जीव का वास्तविक स्वरूप-धर्म है, इसमें जाति व वर्ण की गन्ध भी नहीं है । आत्मधर्म के अनुकूल शरीर और

मन का धर्म अनुष्ठित होने से ही वह जीव के नित्य-मंगल की अनुकूलता प्रदान करता है। वर्तमान दुनियावी प्रगति के कोलाहल के युग में दीक्षित होकर सिर्फ जड़ पदार्थों की प्रगति में लगे रहने पर इसमें बहुत सी बाधाएँ हैं क्योंकि समस्त जड़ पदार्थ ससीम हैं। चेतन या ब्रह्म, परमात्मा एवं भगवत्तत्त्व असीम होने के कारण उस विषय में प्रगति ही सुयुक्तिपूर्ण है। असीम सत्ता, असीम ज्ञान एवं असीम आनन्द की ओर प्रगति के लिये यदि आधुनिक शिक्षित लोग अथवा शासक-लोग थोड़ा ध्यान दें तो निश्चय ही देश से

दुर्दिन चले जायेंगे तथा धीरे-धीरे सुखमय युग का आविर्भाव होगा । आत्म-सम्बन्ध में हम परस्पर भेदबुद्धि से रहित होकर व विद्वेष का परित्याग करके एक अथवा विभिन्न राष्ट्र आपसी एकता स्थापित करने में समर्थ हो सकते हैं। श्रुति मन्त्र- 'आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः (वृ.आ. 4/5/6)। इस परा- विद्या का विस्तार करने के लिये ही श्रीचैतन्य वाणी उपदेश करती है। परन्तु अपरा विद्या आपस में विद्वेषभाव, दम्भ, दर्प आदि अवांछित अवस्थाओं की सृष्टि करती है। जो अपरा विद्या के

मोह से मुग्ध हैं, वे परा विद्या का नाम सुनने से ही विद्वेष करने लगते हैं तथा उसे बेकार, अप्रयोजनीय कहकर उससे दूर रहते हैं, यहाँ तक कि उसे ध्वंस करने के लिये व्यग्र हो उठते हैं।

अपरा विद्या काम, क्रोधादि शत्रुओं एवं दम्भ, दर्प, अभिमानादि को प्रश्रय देती है, परन्तु परा विद्या उससे उद्धार करके जीवों को आनन्दमय श्रीभगवान् के प्रेम में डुबो देती है। फिर वे समझते हैं कि 'श्री चैतन्य वाणी' भगवद्भक्ति के अनुकूल है तथा आत्मा- धर्म के

आनुगत्य में राज्य शासनादि भी हितकर ही है। आत्म-धर्म के अनुकूल रहकर अर्थनीति और व्यापार नीति आदि का विस्तार वाञ्छनीय है। 'श्री चैतन्य वाणी' जीव के प्रति दया का मूर्त्त विग्रह है, इसलिये जाति व वर्ण के भेद की भावना से रहित होकर सभी जीवों के प्रति यथायोग्य दया करनी चाहिए । इसी प्रकार समाजनीति यदि आत्म-धर्म को ध्यान में रखकर बनायी जाए तो इससे समाज की बहुत उन्नति होगी। 'श्री चैतन्य वाणी' 'मा हिंसात् सर्वाणि भूतानिं- इस वेद मन्त्र के विचारों की

पक्षपाती है। हिंसा के फलस्वरूप प्रत्येक को ही प्रतिर्हिंसित होना होगा । जो स्वयं हिंसित होना नहीं चाहते हैं, उनको चाहिए कि वे भी दूसरों की हिंसा न करें।

श्रीलगुरुदेव